भारत के भविष्य के आधार अध्यापक नहीं आचार्य

विवेक नाथ त्रिपाठी*
राज शरण शाही**

वर्तमान समय परिवर्तन का समय है। भारत की शिक्षा व्यवस्था बदलते समय, परिस्थितियों और बाज़ार की माँगों के सापेक्ष लंबे समय से लगभग अपरिवर्तित रही है। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020', इक्कीसवीं शताब्दी की पहली ऐसी शिक्षा नीति है, जो भारत की परंपरा और सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर तैयार की गई है। इसीलिए यह भारत के पुनर्निर्माण पर बल देती है। यह भारतीय ज्ञान परंपरा के संरक्षण को बढ़ावा देती है। भारतीय ज्ञान परंपरा में आचार्य हुआ करते थे। कर्तव्य एवं भूमिकाओं के आधार पर अध्यापक एवं आचार्य में अंतर किया जा सकता है। तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला और वल्लभी जैसे प्राचीन भारत के विश्वविद्यालय आचार्यों की ज्ञान साधना से ही लोक प्रसिद्ध हुए थे। इस लेख में आचार्य के संदर्भ में भारतीय दृष्टि एवं राष्ट्र निर्माण में आचार्य की भूमिका तथा वर्तमान संदर्भ में आचार्य तैयार करने की कार्ययोजना पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था की यात्रा हमें अपने गौरवशाली इतिहास का बोध कराती है। वह हमें यह भी बताती है कि प्रत्येक परिवर्तन के पीछे कुछ न कुछ कारण अवश्य होते हैं। विश्वगुरु की यात्रा तय करने वाली भारतीय शिक्षा व्यवस्था आज अध्यापक, मानदेय अध्यापक, पैरा टीचर, समायोजित अध्यापक आदि-आदि नामों तक आ पहुँची है। प्रश्न यह है कि यह सब कब और कैसे हुआ? इसके लिए महत्वपूर्ण घटक कौन से थे? दूसरी तरफ हम यह भी कह सकते हैं कि विश्वगुरु का दर्जा कैसे मिला? उसके लिए कौन-कौन से महत्वपूर्ण कारक रहे, प्राचीन समय की शिक्षा पद्धति कैसी थी? आचार्य होते थे या अध्यापक? शिक्षा को सेवा भाव माना जाता था या व्यवसाय? वैज्ञानिक विकास भी सांस्कृतिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक सीमाओं में किया जाता था या शिक्षा इन सरोकारों से मुक्त थी? प्राचीन साहित्य के विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते हैं कि भारत की ज्ञान परंपरा और आचार्यों के कारण यहाँ की शिक्षा की चहुँओर प्रतिष्ठा थी। अपने ज्ञान, गरिमा और आचरण की पवित्रता के कारण आचार्य समाज में सम्माननीय थे। राजा भी गुरु के परामर्श और मार्गदर्शन से राजसत्ता का संचालन करते थे। शिक्षालय पूर्णतया स्वतंत्र थे एवं शिक्षा एक पवित्र क्षेत्र था।

महर्षि पंतजलि ने ईसा से दो सौ वर्ष पूर्व शिष्य और आचार्य के लिए अध्ययन, मनन, चिंतन और

* *असिस्टेंट प्रोफेसर*, शिक्षा विभाग, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर, केंद्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश 226025
** *एसोसिएट प्रोफेसर*, शिक्षा विभाग, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर, केंद्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश 226025

प्रयोग के रूप में चार सूत्र दिए थे। वर्तमान में इन चारों सूत्रों के प्रयोग में कमी आई है। आचार्य की जगह अध्यापक, गुरुकुल की जगह परतंत्र विद्यालय, वेदों की जगह व्यवसाय और सबसे महत्वपूर्ण भारत की भाषा एवं संस्कृति, जो भारतीयता की मूल पहचान थी, में परिवर्तन कर शिक्षा का माध्यम बदल दिया। इन सब पर उस समय की तत्कालीन शैक्षिक नीतियों का प्रभाव रहा, परंतु इन सबके अतिरिक्त आचार्य को समाज के सजग प्रहरी के रूप में देखा जाता है जो समाज में हो रहे नकारात्मक परिवर्तनों को रोकने हेतु अपने दायित्वों के निर्वहन हेतु तत्पर रहता है। परंतु आज ऐसा नहीं हो रहा है तभी तो तुलसीदास जी लिखते हैं, "सचिव बैद् गुरु तीनि जौं प्रिय बोलहि भय आस। राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगिहीं नास।। 37।। (संदर्भित *रामचरित मानस* दोहा 37, गीता प्रेस गोरखपुर, उत्तर प्रदेश) अर्थात मंत्री, वैद्य और गुरु ये तीनों यदि अप्रसन्नता के भय या लाभ की आशा से लोकहित की बात न कर प्रिय बोलते हैं तो क्रमशः राज्य, शरीर और धर्म इन तीनों का शीघ्र ही नाश हो जाता है। आचार्य की उसी बदलती भूमिका के कारण आज सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में गिरावट देखी जा रही है।

इसीलिए भारतीय मूल्यों पर आधारित शिक्षा प्रणाली का विकास करना *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* का प्रमुख उद्देश्य है, जिससे समतामूलक समावेशी समाज का निर्माण किया जा सके और हर व्यक्ति राष्ट्र के अनुकूल जीवन मूल्यों का पालन करे और भारतीय होने पर गर्व करे। यह लक्ष्य केवल शिक्षा और अध्यापक के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। और यह तब होगा जब अध्यापक स्वयं को आचार्य की भूमिका में प्रस्तुत करेगा। आचार्य किशोरी दासजी के अनुसार भारत तीन अक्षरों एवं एक मात्रा के सम्मिश्रण से बना है जिसमें 'भ' को पृथ्वी 'र' को अग्नि 'त' को तिमिर तथा 'आ' की मात्रा को ज्ञान का समानार्थी माना जाता है। वे कहते हैं कि ऐसी भूमि जो दूर-दूर तक अज्ञान रूपी अंधेरे में ज्ञानरूपी प्रकाश का संचरण कर रही हो, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति ज्ञान का प्रेमी हो, वह भूमि भारत है। शास्त्री (2016) का मत है कि वर्तमान में हमने इण्डिया कहकर भारत की संकल्पना ही बदल दी। अब बात आती है इसके पुनर्निर्माण की, तो हमें विचार करना होगा उन कारकों पर जिनके कारण भारत का अतीत गौरवशाली रहा है। वे कारक थे— भारत की ज्ञान परंपरा, शिक्षा व्यवस्था, आचार्य, पाठ्यक्रम, उन आचार्यों का आदर्श, शिक्षा का मुक्त होना, स्वतंत्र होना आदि। परंतु उन सबमें आचार्य महत्वपूर्ण घटक था। आज हम न तो आचार्यों को तैयार कर पा रहे हैं और न ही शिक्षा को राजनैतिक एवं प्रशासनिक हस्तक्षेपों से मुक्त कर पा रहे हैं। अत: शिक्षा को तमाम हस्तक्षेपों से मुक्त करने का दायित्व आचार्यों का है, न की अध्यापकों का। इसीलिए मैं (लेखक) कहता हूँ कि अध्यापक नहीं आचार्य निर्माण की आवश्यकता है, तभी इक्कीसवीं सदी के भारत का पुनः निर्माण हो सकेगा।

आचार्य संबंधी भारतीय दृष्टि

विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में भारतीय संस्कृति की गणना की जाती है। ऐसा माना जाता है कि यह 5000 वर्ष पुरानी है। हम यह भी कह सकते हैं कि भारत की संस्कृति पर अनेक आक्रांताओं के द्वारा किए गए वैचारिक आक्रमणों ने निःसंदेह भारतीय

संस्कृति को नुकसान पहुँचाया, फिर भी आज तक भारतीय संस्कृति पूर्णरूपेण जीवित है। इसका प्रमुख कारण हमारी सांस्कृतिक चेतना है, जिसे यहाँ के आचार्यों ने अपनी साधना से निर्मित किया है। भारत की शिक्षा पद्धति ने अनेक आदर्शों को गढ़ा है। चाहे राम हों, कृष्ण हों, बुद्ध हों या महावीर, गुरु वशिष्ठ रहे हों या विश्वामित्र या द्रोणाचार्य, ये सभी भारतीय शिक्षा पद्धति की देन हैं। इन सबके मूल में आचार्य था। वर्तमान से लेकर प्राचीन काल तक आचार्यों को परिभाषित करने का काम शिक्षाविदों एवं मनीषियों ने किया है। भारतीय दृष्टि में आचार्य की बात आती है तो आचार्य विनोबा भावे लिखते हैं, जो स्वयं के आचरण से सिखाए वो आचार्य और जो अध्ययन कराए वो उपाध्याय हैं (राजपूत, 2016)। कबीर कहते हैं, "गुरु कुम्हार शिष कुम्भ है गढ़ि गढ़ि काढ़ै खोट। अंदर हाथ सहारे दे बाहर मारे चोट" (संदर्भित संग्रह कबीर के दोहे) आज इसी भावार्थ के अनुकूल आचार्य तैयार करने की आवश्यकता है। भारत संपूर्ण विश्व में मानवता एवं सद्‌गुणों का पथ-प्रदर्शक रहा है। इसीलिए अरविंद कहते हैं, "अध्यापक राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होते हैं, वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते हैं और श्रम से उन्हें सींच-सींच कर महाप्राण शक्ति बनाते हैं। ध्यान में लाएँ तो हम पाते हैं कि भारतीय दृष्टि में गुरु को भगवान से भी ज्यादा महत्वपूर्ण माना गया है। गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु: गुरुर्देवो महेश्वर:। गुरु: साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नम:।। गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं, "जे गुरु चरण रेणु सिर धरही, ते जग सकल वैभव वश करही" भट्ट (2016)। यह समस्त विचार आचार्य की भूमिका के निवर्हन का प्रतिफल ही है। भारतीय दृष्टि में आचार्य को शिष्य का पालनकर्ता माना जाता था। आदिशंकराचार्य लिखते हैं, "दृष्टान्तो नैव दृष्टस्त्रिभुवनजठरे सद्‌गुरोर्ज्ञानदातु: स्पर्शश्चेत्तय कलप्य: स नयति दहो स्वहतामश्यसारम। न स्पर्शत्वं तथापि श्रितचरगुणयुगे सरगुरु: स्वीयशिष्ये स्वीयं साम्यं विधते भवति निरुपमस्ते वालौकिकोडपि।।" गुरु के लिए त्रिभुवन में कोई उपमा नहीं दी जा सकती है यहाँ तक कि पारसमणि की भी नहीं। क्योंकि पारसमणि लोहे को सोना बनाता है, जबकि गुरु शिष्य को अपने जैसे बना लेता है। अर्थात आचार्य जब अपने जैसे शिष्यों का निर्माण करना शुरू कर दें, तो भारत पुनर्निर्माण की ओर बढ़ चलेगा। भारतीय संस्कृति धर्म के अनुकूल आचरण पर बल देती है। महाभारत के वनपर्व में एक श्लोक में धर्म के बारे में बताया गया है— "स्वकर्मनिरतों यस्तुधर्मः स इति निश्रय'' अर्थात अपने कर्म में लगे रहना धर्म है।" "सत्य धर्मस्तयो योगः अर्थात सत्य ही धर्म है, सत्य ही तप है और सत्य ही योग है। भारतीय दृष्टि में आचार्य इसी धर्म का पालन करता है अर्थात कर्म में लगा रहता है, शिष्यों को अपने पास रखता है तथा उनके संपूर्ण शिक्षण की व्यवस्था करता है। आज इसी प्रकार के आचार्यों की आवश्यकता है। आचार्य एक ऐसी स्थिति है, जो अध्यापक अथवा अध्यापक से कुछ अधिक त्याग, समर्पण एवं उपासना की माँग करती है। "आचार ग्राहयति अचिनोत्यथार्न अचिनोति बुद्धिमति वा आचार्यभः।" रेडिड (2017)। इस श्लोक में आचार्य के तीन अर्थ दिए गए हैं— जो आचरण से सिखाए, जो नैतिक आचरण से धन इकट्ठा करे और जो बुद्धि के साथ ज्ञान का मिश्रण कर सत्यता का बोध करा दे, उसे भारतीय दृष्टि में आचार्य कहते हैं।

राष्ट्र और समाज निर्माण में आचार्य की भूमिका

भारत का यह गौरवशाली इतिहास रहा है कि वह हमेशा विश्वकल्याण की बात करता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम' जिसका आदर्श रहा है, जो संपूर्ण पृथ्वी को अपनी माँ मानता हो। प्राचीन भारत में रामराज एक आदर्श राज्य के प्रतिमान के रूप में हमारे समक्ष था। परंतु आज के युग में हमारा प्रतिमान हमारे संविधान की प्रस्तावना है। इस प्रस्तावना में कहा गया है कि भारत एक ऐसा गणराज्य हो जिसमें समता, समानता, न्याय एवं विश्वबन्धुत्व की भावना हो। हमें दोनों ही प्रतिमानों के आधार पर राष्ट्र का निर्माण करना होगा। मेरी (लेखक) समझ से यह तभी हो सकेगा जब अध्यापक को आचार्य का दर्जा दिया जाए और आचार्य अध्यापक की भूमिका में न होकर अपने आचार्यतत्व का पालन करे, आचार्य की भूमिका का निर्वहन करे। मेरा (लेखक) विश्वास है कि जब आज का अध्यापक आचार्य की भूमिका में आएगा तभी भारत का निर्माण हो सकेगा। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस अपेक्षित पुनर्निर्माण में अध्यापक के स्थान पर आचार्य को बैठना होगा तभी एक आदर्शवादी राष्ट्र का निर्माण हो सकेगा। परंतु आज विडंबना यह है कि विकास एवं वैज्ञानिक चेतना तथा वैश्वीकरण के नाम पर हम अपने राष्ट्रीय धर्म से विमुख होते जा रहे हैं।

भारत में सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विरासत के रूप में अनेक धर्मग्रंथों की रचना हुई। जिसमें *गीता, महाभारत, रामचरित मानस, वेद, उपनिषद* आदि ग्रंथ हैं। ये सभी ग्रंथ एक आदर्श राष्ट्र की संकल्पना एवं निर्माण की प्रेरणा देते हैं। जिसमें *गीता* आचार्य एवं शिष्य के उपदेशों का पवित्र ग्रंथ है। वहीं दूसरी ओर *रामचरितमानस* एक आदर्श राष्ट्र की संकल्पना का ग्रंथ है। भारत की परंपरा श्रद्धा, समर्पण एवं त्याग की भावना सीखने की रही है, हमारे धर्मग्रंथ जीवन जीने का संपूर्ण प्रतिमान प्रस्तुत करते हैं। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि आदर्श जीवन जीना, आध्यत्मिक सीमाओं के अंर्तगत राष्ट्र का विकास करना, त्याग, बलिदान, स्नेह और मानवता से ओत-प्रोत राष्ट्र के निर्माण के लिए आचार्यों का निर्माण करना होगा।

दूसरी तरफ हमें समझना होगा कि समाज का निर्माण आचार्य से ही होता है, क्योंकि वह समाज के लिए एक आदर्श आचरण प्रस्तुत करता है। इसीलिए समाज के प्रति उसके दायित्व तथा समाज द्वारा आचार्यों का संरक्षण इन दोनों बातों पर ध्यान देना होगा। आज एक तरफ हम कहते हैं कि अध्यापक हमारे राष्ट्र निर्माता हैं और दूसरी तरफ हम इन राष्ट्र निर्माताओं को पैरा अध्यापक आदि नामों से संबोधित करते हैं।

हम जानते हैं कि सभ्यता एवं संस्कृति की दृष्टि से भारत संपूर्ण विश्व का मार्गदर्शन कर रहा था। उसका भी प्रमुख कारण आचार्य की भूमिका ही है। भारत के इस स्वर्णिम युग का अंत हो गया और वैचारिक आक्रमणों ने पूरी शिक्षा पद्धति को ही बदल दिया और आज तक हम अपने भारत की उस संकल्पना को साकार नहीं कर पाए, क्योंकि हमने अध्यापक गढ़ने शुरू कर दिए आचार्य नहीं। भारत के निर्माण के लिए आचार्यों का निर्माण करना पड़ेगा, आचार्य विचारों को जन्म देंगे और विचार ही तो क्रान्ति लाते हैं। अतः भारत के निर्माण के लिए वैचारिक क्रान्ति लानी होगी। भारतीय शिक्षा पद्धति भारतीय संस्कृति की मेरूदण्ड रही है, जो आचार्यों के आचरण पर

निर्भर करती है। प्राचीन भारत में व्यक्ति के लिए तीन ऋणों की बात की गई थी, जिसमें ऋषि ऋण केवल विद्याध्ययन के द्वारा ही चुकाया जा सकता था। हमें अपनी शिक्षा पद्धति, शिक्षा और अध्यापक शिक्षा में भी यह भाव लाने की आवश्यकता है। आज शिक्षा व्यवसाय का प्रमुख माध्यम है, जो कभी सेवाभाव का माध्यम हुआ करती थी। हमें उस भाव को फिर से स्थापित करना होगा। तभी समाज तथा राष्ट्र निर्माण में अध्यापक प्रभावी भूमिका का निर्वहन कर सकेंगे।

अध्यापक और आचार्य में अंतर

आचार्य की भूमिका अध्यापकों की भूमिका से अलग होती है। भारत में अध्यापक नहीं आचार्य हुआ करते थे और उन्हें आचार्य की संज्ञा उनके कर्तव्यों एवं भूमिका के आधार पर दी जाती थी। भारतीय परंपरा में आचार्य को उनके आचरण से जाना जाता है। आचार्य का आचरण समाज एवं राष्ट्र का दर्पण होता है। आचार्य के जीवन का उद्देश्य राष्ट्र का कल्याण करना होता है। आचार्यों को तपस्वी और भिच्छुक के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसीलिए हम वर्तमान व्यवस्था में जिन्हें स्वीकार कर रहे हैं, वो आचार्य नहीं अध्यापक हैं। हमें आवश्यकता आचार्य की है और हम अध्यापक स्वीकार रहे हैं। कैसे हो भारत का निर्माण? आचार्य अपने कर्तव्यों को ईश्वर प्रदत्त मानते थे। अध्यापक अपना कर्तव्य केवल शिक्षण कार्य तक ही सीमित रखते हैं। शिक्षण एक कला है और कला को शास्त्रीय पद्धति से सिखाया जा सकता है। ज्ञान की अनुभूति से मनुष्यत्व साकार होता है, ज्ञान के साक्षात्कार की विधि को ही वास्तविक शिक्षण कहा जाता है। कानितकर (2016) लिखते हैं कि जब हम शिक्षण में व्यक्तित्व का विकास या सर्वांगीण विकास की बात करते हैं तो इस प्रकार की शिक्षा प्रक्रिया में अध्यापक की भूमिका मात्र केवल विषय की जानकारी देने वाले व्याख्याता की नहीं रह जाती, इससे अधिक होती है। भारतीय परंपरा में जब हम भूमिका के आधार पर पदनाम की बात करते हैं तो शिक्षण देने वाले अध्यापक और जो उससे कुछ अधिक करे, उसे आचार्य कहा जाता है। आचार्य शब्द उसी धातु से बना है जिस धातु से आचरण बनता है, चरण यानी चलना, चर से ही आचरण बना और चर से चरित्र और आचार्य। अतः शिक्षा में आचार्य की भूमिका केवल सिद्धांतों को स्पष्ट करने तक सीमित नहीं है। उन सिद्धांतों पर चलने वाले व्यक्ति का निर्माण अर्थात आचरण को परिवर्तित करने की क्षमता रखने वाला आचार्य कहलाता है। दूसरी तरफ यह भी माना गया है कि शिष्य का आचरण आदर्श की ओर तभी अग्रसर होगा, जब उसे उसी प्रकार की प्रेरणा उसके आचार्य से मिले अर्थात जो आचरण से सिखाए। यहीं से अध्यापक और आचार्य की भूमिका में अंतर स्पष्ट हो जाता है। आचार्य एक ऐसी स्थिति है जो अध्यापक, अध्यापक से कुछ अधिक त्याग, समर्पण एवं उपासना का नाम है। आचार्य का कार्य आदर्श आचरण प्रस्तुत करना है और शिष्य का कार्य है, आचार्य के आचरण से सीख लेकर आचरण करना। इस प्रकार दोनों एक-दूसरे के पूरक हो जाते हैं। उपनिषद में एक शान्ति मंत्र है 'ॐ सहनाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्य करवाव है। तेजिस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषाव है।' यह शांति मंत्र आचार्य और शिष्य के भेद को समाप्त करता है अर्थात गुरु और शिष्य दोनों में कोई भेद नहीं है।

इस प्रकार वर्तमान में अध्यापक और शिष्य में भेद होने के बहुत कारण हैं, दोनों का अवलोकन

किया जा सकता है। इस श्लोक में दोनों साथ में प्रार्थना कर रहे हैं कि हम दोनों का विकास हो, भरण पोषण हो, तेज और वीर्य की वृद्धि हो, आपस में द्वेष न हो। यह प्रार्थना इस भाव को स्पष्ट कर रही है कि आचार्य और शिष्य दोनों ही अपने स्तर से ऊपर उठेंगे। यह भाव ही आचार्यत्व है। आज के अध्यापक में इस भाव का अभाव है इसीलिए राष्ट्र निर्माण हेतु अध्यापक नहीं आचार्य की आवश्यकता है।

ज्ञान और आचरण, सिद्धांत और व्यवहार, अध्ययन और प्रयोग ही तो आचार्य बनाने के मूल गुण हैं। हम नई पीढ़ी का निर्माण तो कर रहे हैं, परंतु आचार्यत्व का प्रयोग किए बिना। अब प्रश्न यह है कि क्या हमारी आज की संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था शिष्य के जीवन मूल्यों को उनके आचरण को सुदृढ़ करने का कार्य कर रही है? तो निश्चित रूप से हम कह सकते हैं कि कुछ सीमा तक। हम यह भी जानते हैं कि इसके लिए अध्यापक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और यह भूमिका ही आचार्य एवं अध्यापक का निर्धारण करती है। आचार्य विद्यानिवास मिश्र कहते हैं कि आचार्य शब्द का बड़ा विशद अर्थ है, "आचार्य वह है जो केवल स्वयं आचरण ही नहीं करता बल्कि आचरण कराता भी है। उपनिषदों में आचार्य को ज्ञान का भण्डार कहा जाता है, जो वेदों से निर्मित है। उपनिषद का अर्थ निकट बैठना अर्थात समीपता है। यह समीपता शिक्षा व्यवस्था के प्रत्येक बिंदु पर हम देख सकते हैं, गुरु का शिष्य के साथ, शिष्यों का वेदों के साथ। हमारे प्रामाणिक ग्रंथ कहते हैं कि हमें सबका कल्याण करना है अर्थात "सर्वेभवन्तु सुखिना सर्वे सन्तु निरामया''।। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु।।" अर्थात राष्ट्र रक्षा के लिए श्रेष्ठ एवं कनिष्ठ किसी में भेद न हो, सभी साथ हों, सुखी हों, इन प्रयोजनों की सिद्धि शिक्षा से ही संभव है। इसीलिए राष्ट्र निर्माण हेतु आचार्य का निर्माण आवश्यक है। एकात्म दृष्टि का भाव शिष्य के अंदर आचार्य से ही संभव है। क्योंकि आज के अध्यापकों में एकात्म दृष्टि अर्थात सबको एक दृष्टि से देखने का अभाव है।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में ज्ञान ग्रहण करने और प्रदान करने की अनेक प्रविधियाँ थीं। जिससे आचार्य तत्व को विकसित किया जाता था। तुलसीदास जी कहते हैं— ज्ञान, भक्ति और कर्म शिक्षा का आधार होना चाहिए। अतः आचार्य को सभी को एक भाव से देखना पड़ेगा, सबके कल्याण की बात करनी होगी।

आज की शिक्षा व्यवस्था में शिक्षण, पुस्तक से किया जाता है, आचरण से नहीं। इसीलिए अध्यापक नहीं आचार्य की आवश्यकता है, जो आचरण से शिक्षित करे, जिसमें आत्मीयता का बोध एवं सृजनशीलता का आह्वान हो। आज अध्यापक सहायक और सुविधा प्रदान करने की भूमिका में आ गया है। इसीलिए मैं (लेखक) कहता हूँ कि अब भूमिका बदल गई है, समाज बदल गया है। आज पुनः एक बार भारत के निर्माण के लिए सहायक नहीं, प्रत्येक व्यक्ति को पालक बनने की आवश्यकता है और पालक सिर्फ आचार्य हो सकता है। उसे हमने अध्यापक बना दिया है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था में शिष्य को दीपक की संज्ञा दी जाती है, उसका प्रशिक्षण इस प्रकार से होता था कि जब वह समाज में जाए, तो प्रकाश फैलाने का कार्य करे। आज हम व्यक्तिगत स्वार्थों तक सीमित हो चुके हैं, उसमें भी मैं (लेखक) पूर्णतः अध्यापक और आचार्य की भूमिका

में अंतर को ही दोषी मानता हूँ। देश के शिक्षा दर्शन का प्रभाव उस देश की प्रगति का द्योतक होता है और सच्चा दर्शन तो आचार्य की सच्ची सहानुभूति में होता है। सहानुभूति के बिना हम मूल्यपरक शिक्षा नहीं दे सकते। आज आचार्य और शिष्य के संबंधों की उपेक्षा हुई है। इसीलिए आचार्य वाचक बन गया।

आचार्य चाणक्य कहते हैं कि प्रलय व निर्माण अध्यापक की गोद में पलता है। यहाँ पर यह समझना होगा कि वह अध्यापक की बात नहीं कर रहे हैं, आचार्य की बात कर रहे हैं। हमारे उपनिषदों में एक वाक्य आता है— "स्वाध्याय-प्रवचनाक्या न प्रमादितत्यम" अर्थात शिक्षण और शिक्षा अर्जन में कभी प्रमाद मत करो, यह भाव की बात है। ज्ञान अर्जन और ज्ञान प्रदान करना, इन दोनों प्रकार की प्रक्रियाओं को पूरा करने में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। इसीलिए हमें सोचना होगा कि भारत का पुनरुत्थान अर्थात नया भारत कैसा होगा? उस भारत का निर्माण कैसे करेंगे? और वह इस बात पर निर्भर करेगा कि हम अध्यापक का निर्माण कर रहे हैं या आचार्य का। भारत के निर्माण की संकल्पना को सत्य करना है तो हमें आचार्यों का निर्माण करना होगा, उनकी खोज करनी होगी। भारतीय ज्ञान परंपरा को पाठ्यक्रमों में जोड़ना होगा तभी एक सशक्त, समृद्ध भारत का निर्माण होगा, जिसमें रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्र का मंगल करने वाला होगा।

भारतीय आचार्य— अपेक्षाएँ एवं दक्षताएँ

भारतीय शिक्षा प्रणाली में आचार्य उसे कहा गया है जो उच्चकोटि के आध्यात्मिक चिंतन, चरित्र, गुण, कर्म, अपर्ण, उपासना, सम्पोषण जैसे गुणों को अपने जीवन में उतारकर उसके अनुकूल आचरण करता है। जिसके जीवन का मूल आधार कल्याण तथा मानवता हो। अतः भारत के भविष्य के लिए प्रत्येक अध्यापक को स्वयं के जीवन को आचार्य के समान बनाना होगा। भारत को ऐसे आचार्यों की आवश्यकता है जो अपने आचरण से समाज में ज्ञान एवं एकता का संचरण कर सके। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* समर्पित एवं प्रतिबद्ध अध्यापक तैयार करने की अनुशंसा करती है, जिसका संदर्भ आचार्य से जोड़ा जा सकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और आचार्य

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, इक्कीसवीं शताब्दी की पहली ऐसी शिक्षा नीति है, जिसे भारत की परंपरा और संस्कृति को आधार बनाकर तैयार किया गया है। यह शिक्षा व्यवस्था, उसके संघटक और गवर्नेंस सहित, सभी पक्षों के सुधार और पुनर्गठन का प्रस्ताव रखती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रत्येक व्यक्ति में रचनात्मक क्षमताओं के विकास पर विशेष ज़ोर देती है। वैश्विक महत्व की समृद्ध विरासत को सहज कर रखने की जरूरत पर *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* बल देते हुए कहती है कि शिक्षा व्यवस्था में किए जा रहे बुनियादी बदलावों के केंद्र में अवश्य ही अध्यापक होने चाहिए। शिक्षा नीति हर स्तर पर अध्यापकों को समाज के सुधारक सदस्य के रूप में पुनः तैयार करने हेतु तत्पर दिखाई देती है। अध्यापक ही हमारी आगे की पीढ़ी को सही मायने में आकार देते हैं। इसीलिए *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में अध्यापकों को सक्षम बनाने के हर संभव कदम उठाए जाने की बात कही गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति समर्पित एवं प्रतिबद्ध अध्यापक तैयार करने की अनुशंसा करती है।

यह शिक्षा नीति अगली पीढ़ी के विकास में अध्यापक की भूमिका को स्वीकार करते हुए अध्यापकों को सक्षम बनाने हेतु मान, सम्मान, मर्यादा स्थापित करने के लिए हर संभव प्रयास किए जाने पर बल देती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति अध्यापक की पुरानी गरिमा को स्थापित करना चाहती है। जिसमें आचार्यत्व निहित हैं। इस शिक्षा नीति का विजन भारतीय मूल्यों से विकसित शिक्षा प्रणाली पर आधारित है। भारत की शास्त्रीय भाषाओं और साहित्य के महत्व को रेखांकित करते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति उसे संरक्षित करने की बात करती है। शिक्षा नीति के सफल क्रियान्वयन के लिए राष्ट्र, राज्य, समाज, संस्था एवं व्यक्तिगत स्तर पर सहयोग की अपेक्षा करती है और उनकी भूमिका में परिवर्तन की बात करती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलोक में अध्यापक को आचार्य के रूप में परिवर्तित करने की कार्ययोजना

भारतीय मूल्यों एवं प्रतिमानों के आधार पर शिक्षा को प्रतिष्ठित करने के संकल्प के साथ आई *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* शिक्षा व्यवस्था में अध्यापक के महत्व को स्वीकार करते हुए कुशल एवं दक्ष अध्यापक तैयार करने की आवश्यकता को स्पष्टत: रेखांकित करती है। शिक्षा नीति यह स्वीकार करती है कि आगे की पीढ़ी को आकार देने में अध्यापकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। रटने की प्रक्रिया के बजाय शिक्षा को सीखने की जीवंत प्रक्रिया बनाने पर ज़ोर देती है। रचनात्मकता और नवोन्मेष को शिक्षा में यदि प्रमुखता से स्थापित करना है तो अध्यापक निर्माण की प्रक्रिया को जीवंत और प्रभावी बनाना होगा। अध्यापक शिक्षा के संस्थानों को इस प्रकार से पुनर्नियोजित करना होगा जहाँ से ऐसे अध्यापक तैयार हों, जो शिक्षा को ज्ञानात्मक विकास के साथ-साथ भावात्मक तथा मनोगत्यात्मक विकास की ओर ले जाएँ। जिससे स्वामी विवेकानंद की शिक्षा की संकल्पना साकार हो, जिसमें वह कहते हैं कि मैं ऐसी शिक्षा चाहता हूँ जिससे बुद्धि का विकास हो, मानसिक शक्ति का विस्तार हो, चरित्र का निर्माण हो तथा जिसके द्वारा व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके। इसके लिए प्रतिबद्ध, प्रभावी तथा दक्ष अध्यापक तैयार करने पर यह शिक्षा नीति बल देती है। ज्ञान, सामाजिक संवेदना और राष्ट्रीय आकांक्षाओं के प्रति प्रतिबद्धता के विकास की दृष्टि से अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रमों को पुनर्नियोजित करना होगा, तभी ऐसे अध्यापक तैयार होंगे जो ज्ञानवान एवं चरित्रवान होंगे और उनकी प्रत्येक गतिविधि के केंद्र में मनुष्यता का संरक्षण और संवर्धन होगा। इसके लिए अध्यापक निर्माण की प्रक्रिया को जीवंत बनाना होगा तथा सामाजिक जीवन के प्रत्यक्ष अनुभवों के साथ भावी अध्यापकों को जोड़ना होगा। संस्कार और संस्कृति को पाठ्यचर्या तथा गतिविधि दोनों ही स्तरों पर पर्याप्त महत्व देना होगा। शिक्षण कौशल में निपुणता हेतु उन्हें प्रशिक्षित करने के साथ-साथ राष्ट्र जीवन को गौरव प्रदान करने वाली सांस्कृतिक विरासत के जीवंत अनुभव प्रदान करने की व्यवस्था करनी होगी। वर्तमान में कार्यरत अध्यापक समुदाय को आचार्य समुदाय में परिवर्तित (बदलाव) करने हेतु निम्नलिखित कार्ययोजना पर कार्य करना होगा—

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अध्यापकों की शिक्षा हेतु प्रतिबद्धता को सर्वाधिक प्रभावी घटक माना गया है। अध्यापक में आचार्यत्व के विकास

हेतु अध्यापकों में पाँच प्रकार की प्रतिबद्धताओं की आवश्यकता है— शिक्षार्थी के लिए प्रतिबद्धता, समाज व राष्ट्र के लिए प्रतिबद्धता, शिक्षकीय गरिमा के लिए प्रतिबद्धता, आधुनिकता के साथ ही साथ भारतीय ज्ञान परंपरा के लिए प्रतिबद्धता तथा संस्कृति एवं संस्कारों के प्रति प्रतिबद्धता। इसी प्रकार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने अध्यापकों के दक्षता निर्माण पर भी बल दिया है। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् ने भी अपने दस्तावेज में दस दक्षताओं का उल्लेख किया है, जिनमें प्रासंगिक दक्षताएँ, पाठ्यक्रम संबंधी दक्षताएँ, अवधारणात्मक दक्षताएँ, कार्य निष्पादन दक्षताएँ, अन्य शैक्षणिक गतिविधियों से जुड़ी दक्षताएँ, अध्ययन व अध्यापन सामग्री विकसित करने संबंधित दक्षताएँ, मूल्यांकन दक्षताएँ, प्रबंधन दक्षताएँ, अभिभावकों के साथ कार्य करने संबंधी दक्षताएँ, समुदाय संपर्क तथा सहयोग संबंधी दक्षताएँ सम्मिलित हैं। इन प्रतिबद्धताओं तथा दक्षताओं के विकास हेतु निम्न सुझाव दिए गए हैं —

- आधुनिक ज्ञान और विज्ञान की शिक्षा के साथ-साथ भारत की ज्ञान परंपरा की जानकारी पाठ्यक्रम में देनी होगी, जिससे कि अध्यापकों में भारतीय ज्ञान परंपरा के प्रति निष्ठा का भाव जागृत हो सके।
- भारतीय जीवन दृष्टि के विकास के बिना आचार्य बनने की यात्रा पूरी नहीं हो सकती है। भारतीय जीवन दृष्टि के विकास हेतु भारतीय जीवन मूल्यों पर आधारित शैक्षिक वातावरण तैयार करना होगा, इस दिशा में गुरुकुलम का उदाहरण दिया जा सकता है।
- विद्यालयी वातावरण को गुरुकुल के अनुसार नियोजित करने का प्रयास किया जाए। भोजन मंत्र, विद्या मंत्र, साधना सभा, आचार्य की वेशभूषा जो प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा के परिचायक थे, उन्हें पुन: शैक्षिक संस्थानों में पुनर्जीवित किया जाए तथा उन्हें आज के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिक बनाने की आवश्यकता है।

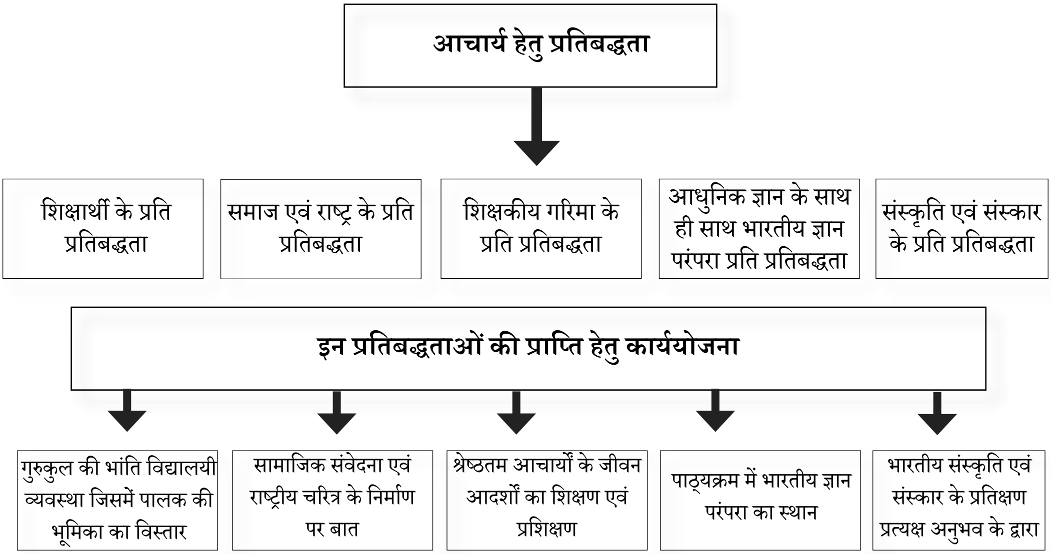

- विद्यालयों को गुरुकुल बनाने का कार्य गुरुओं का है। वर्तमान उच्च शिक्षा के संस्थानों का नियोजन इस प्रकार किया जाए, जिससे कि गुरु तत्व का विकास हो सके। इसके लिए भारतीय ज्ञान परंपरा को पाठ्यक्रमों में यथोचित स्थान देना होगा तथा अध्यापकों को सीखने व सिखाने हेतु स्वतंत्र और स्वायत्त वातावरण प्रदान करना होगा।
- जीवन के साथ संस्कारों का घनिष्ठ संबंध है और भारतीय जीवन में संस्कारों का बड़ा महत्व है। अतः शैक्षिक दृष्टि से महत्वपूर्ण संस्कारों, जैसे— विद्यारम्भ संस्कार, उपनयन संस्कार, समावर्तन संस्कार आदि को शिक्षा व्यवस्था में पुनः प्रतिष्ठित करना होगा जिससे कि व्यक्ति का अपने परिवार, समाज तथा राष्ट्र के प्रति कर्तव्य का बोध हो सके, तभी सही अर्थों में अध्यापक आचार्य बनने की दिशा में अग्रसर हो सकेंगे।
- आचार्य एक ऐसी स्थिति है, जो अध्यापक या अध्यापक से कुछ अधिक त्याग, समर्पण एवं उपासना की माँग करती है। वर्तमान में कार्यरत अध्यापक समुदाय को आचार्य समुदाय में परिवर्तित (बदलाव) करने हेतु हमें इन मूल्यों से जुड़े विषयों को पाठ्यक्रमों में सम्मिलित करने के साथ-साथ त्याग एवं सेवाभावी लोगों के सानिध्य में इन मूल्यों को सीखने हेतु अवसर प्रदान करने होंगे।
- एकात्म मानववाद दर्शन जैसे विषयों को अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में सम्मिलित कर भावी अध्यापकों में एकात्मकता की दृष्टि विकसित की जा सकती है।
- वर्तमान में कार्यरत अध्यापक समुदाय को प्राचीन भारतीय आचार्यों, प्रसिद्ध विद्वानों व उनके जीवन दर्शन को पढ़ने, मनन करने और उनकी शिक्षा पद्धति पर शोध कर उसका व्यावहारिक प्रयोग करने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित करना होगा। तभी वैदिक शिक्षा व्यवस्था में प्रचलित उपाध्याय, आचार्य, पंडित, गुरु, पुरोहित जैसे प्रतिबद्ध और समर्पित अध्यापक तैयार हो सकेंगे।
- भारत के श्रेष्ठ आचार्यों, जैसे— आर्यभट्ट, भास्कराचार्य, पतंजलि, गौतम, मैत्री, गार्गी, चाणक्य, विवेकानंद, मदन मोहन मालवीय, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर, सावित्री बाई फुले जैसे श्रेष्ठ आचार्यों के जीवन दर्शन एवं शिक्षा पद्धति को अध्यापक शिक्षा में शामिल किया जाए।
- वर्तमान में कार्यरत अध्यापक समुदाय को आचार्य समुदाय में परिवर्तित करने हेतु वैदिक साहित्य में वर्णित चार सूत्र— अध्ययन, मनन, चिंतन और प्रयोग को अपने शिक्षकीय व्यवहार में अपनाना होगा।
- भारतीय दृष्टि में, स्वयं के आचरण से जो सिखाए वह आचार्य है। वर्तमान अध्यापक समुदाय को स्वयं के आचरण से प्रेरणा प्रदान करते हुए अपने जैसे शिष्यों का निर्माण करने की ओर बढ़ना पड़ेगा। हमें इस प्रकार की योजना बनानी होगी, जिसमें आचार्य के समरूप शिष्य का निर्माण हो सके। हमें वर्तमान अध्यापक समुदाय को ज्ञानवान एवं आचारवान बनाने की दिशा में कार्य करना होगा।
- ऋषि ऋण केवल विद्याध्ययन के द्वारा ही चुकाया जा सकता है। हमें अपनी शिक्षा पद्धति,

शिक्षा और अध्यापक शिक्षा में यह भाव लाने की आवश्यकता है। तभी अध्यापकों में सेवा और समर्पण के भाव का जागरण हो सकेगा।

- आश्रम पद्धति, गुरुकुल प्रणाली जैसी शिक्षा व्यवस्था को पुनः स्थापित कर उसे अपनाने के लिए सरकारी स्तर के साथ-साथ सामाजिक स्तर एवं व्यक्तिगत स्तर पर पहल की जाए।
- अध्यापकों को भारतीय ज्ञान परंपरा के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान, विज्ञान व शैक्षिक तकनीकी की जानकारी दी जाए। जिससे भारतीय मूल्यों और परंपराओं पर आधारित आधुनिक युग की दक्षताओं से युक्त अध्यापक तैयार किए जा सकें। तभी अध्यापक आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हो सकेगा। विश्व में जहाँ कहीं भी अच्छा प्रयोग हो रहा हो उसे जानने तथा अपनाने हेतु उन्हें जागरूक बनाने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में विदेशी को स्वदेशानुकूल तथा स्वदेशी को युगानुकूल बनाना अपेक्षित है।

निष्कर्ष

स्वतंत्रता के बाद शिक्षा में सुधार की दृष्टि से अनेक योजनाओं, नीतियों व आयोगों का गठन व क्रियान्वयन किया गया। जिसमें अध्यापकों की भूमिका को महत्वपूर्ण माना गया है। अतः किसी भी शिक्षा प्रणाली की प्रभावशीलता अध्यापक पर निर्भर करती है। वह भविष्य के समाज के स्वरूप का निर्धारक होता है। इसीलिए कोठारी आयोग (1964–68) ने कहा कि भारत के भाग्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में हो रहा है। ऐसी स्थिति में अध्यापक का निर्माण राष्ट्र की आवश्यकता एवं आकांक्षाओं के अनुकूल होना चाहिए। इस प्रकार शिक्षा नीति के विभिन्न प्रतिवेदनों का संदर्भ ग्रहण करें तो हम देखते हैं कि हम अभी भी शिक्षा के मात्रात्मक विस्तार के लिए संघर्ष कर रहे हैं, गुणात्मक विकास जो राष्ट्र निर्माण के लिए आवश्यक है, उससे हम अभी भी दूर हैं। इसीलिए आज ज्ञानवान, संकल्पित व समर्पित अध्यापकों की आवश्यकता है। संकल्प और समर्पण प्राचीन भारतीय शिक्षा के बुनियादी मूल्य हैं। इसीलिए आचार्य को संकल्प, साधना, अर्पण, समर्पण एवं सिद्धि का परिचायक माना जाता था। हमें अध्यापक एवं आचार्य की भूमिका में अंतर समझना होगा और वर्तमान में कार्यरत अध्यापक को आचार्य के रूप में परिवर्तित करने के लिए ऊपर दी गई कार्ययोजना को व्यावहारिक रूप देना होगा, तभी शिक्षा के द्वारा व्यक्ति निर्माण, समाज निर्माण एवं राष्ट्र निर्माण की संकल्पना साकार हो सकेगी। अतः भारतीय जीवन दर्शन पर आधारित शिक्षा सर्व हितैषी एवं सर्व मंगलकारी होनी चाहिए, जिसकी प्राप्ति ज्ञानवान, चरित्रवान व एकात्म दृष्टि वाले आचार्य से ही संभव है।

संदर्भ

भट्ट, रामचन्द्र. 2016. *अध्यापक शिक्षा के लिए उपनिषद आधार दर्शन*. पृष्ठ संख्या 19–21. अध्यापक शिक्षण का आदर्श. भारतीय शिक्षण मण्डल, प्रधान कार्यालय, नागपुर.

मुकुल, कानितकर. 2016. *आचार्यत्व का जागरण ही आचार्य शिक्षण है*. पृष्ठ संख्या 1–7. अध्यापक शिक्षण का आदर्श. भारतीय शिक्षण मण्डल, प्रधान कार्यालय, नागपुर.

रस्तोगी, लीला. 2016. *शिक्षा का दर्शन तथा अध्यापक की भारतीय दृष्टि*. पृष्ठ संख्या 11. अध्यापक शिक्षण का आदर्श. भारतीय शिक्षण मण्डल, प्रधान कार्यालय, नागपुर.

राजपूत, जगमोहन सिंह. 2016. *अध्यापक शिक्षा की घटती उत्कृष्टता तथा गिरती साख*. पृष्ठ संख्या 5–9. अध्यापक शिक्षण का आदर्श. भारतीय शिक्षण मण्डल, प्रधान कार्यालय, नागपुर.

रामचरित मानस. गीता प्रेस, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2015. *अध्यापक शिक्षा में प्रतिबद्धता. भारतीय आधुनिक शिक्षा.* वर्ष 35. पृष्ठ संख्या 18–27. रा.शै.अ. प्र. प., नई दिल्ली.

रेडिड. 2017. *बेहतर भारत बेहतर दुनिया*. शर्मा, आचार्य. (1998) मनुष्य में देवत्व का उदय. अखण्ड ज्योति संस्थान. मथुरा, उत्तर प्रदेश.

वालिया. 1998. *अध्यापक शिक्षा में प्रतिबद्धता*. राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली.

शास्त्री, मेहुल. 2016. *गुरुकुल आचार्य परम्परा परिचय. दर्शन*. पृष्ठ संख्या 42–48. अध्यापक शिक्षण का आदर्श. भारतीय शिक्षण मण्डल, प्रधान कार्यालय, नागपुर.

शिक्षा मंत्रालय.1964. *शिक्षा आयोग की रिपोर्ट* (1964–66) शिक्षा एवं राष्ट्रीय विकास, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली.

त्रिपाठी, विवेक नाथ. 2014. दो *वर्षीय बी.एड. पाठ्यक्रम के प्रति प्रशिक्षु अध्यापकों का दृष्टिकोण. भारतीय आधुनिक शिक्षा.* वर्ष 3. अंक 4. रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली.